समाजवाद

- जैसा कि हमने देखा कि पुरातन व्यवस्था के विरुद्ध आरंभिक संघर्ष मध्यवर्ग ने आरंभ किया था तथा मध्य वर्ग की विचारधारा जो प्रबोधन, अमेरिकी क्रांति और फ्रांस की क्रांति के मध्य विकसित हुई, उसे उदारवाद के नाम से जाना गया। (राष्ट्रवाद की पहचान भी मध्यवर्गीय विचारधारा के रूप में हुई है।) निम्न वर्ग भी इस व्यवस्था से अत्यधिक असंतुष्ट था, परंतु उसका न तो स्वतंत्र नेतृत्व था और न ही स्वतंत्र विचारधारा। इसलिए वह नेतृत्व के लिए मध्यवर्ग की ओर ही देखता रहा था परंतु मध्यवर्गीय नेतृत्व से उसे निराशा मिलती रही थी। अंत में, उसने अपना नेतृत्व और पृथक विचारधारा प्रस्तुत की जिसे समाजवाद के नाम से जाना गया। परंतु यह स्थिति औद्योगिक क्रांति के पश्चात् ही प्रकट हुई।
- वस्तुत: समानता की अवधारणा इतिहास में कोई नई विचारधारा नहीं थी। पीछे के चिंतक भी मानव समानता पर बल देते रहे थे। रूसो ने पहले ही यह घोषित कर दिया था कि मानव स्वतंत्र पैदा हुआ है तथा सभी मानव समान हैं क्योंकि वे प्रकृति की संतान हैं। परंतु आधुनिक संदर्भ में समाजवाद की अवधारणा औद्योगिक क्रांति की देन है। औद्योगिक क्रांति ने निम्नलिखित प्रभाव पैदा किया था-

1. औद्योगीकरण के साथ श्रमिकों की संख्या बढ़ी। इस कारण निम्न वर्ग पहले की तुलना में अधिक ताकतवर बनकर उभरा।
2. पूँजी के द्वारा श्रम का अत्यधिक शोषण आरंभ हुआ, इस कारण श्रमिकों में असंतोष उत्पन्न होने लगा।

- फिर श्रमिकों की दशा पर विचार करने के लिए कुछ बुद्धिजीवी सामने आए। वे मध्य वर्ग की पृष्ठभूमि से ही थे तथा वे शान्तिपूर्ण तरीके से अपने लक्ष्य को पाना चाहते थे। इन्हें आरंभिक समाजवादी चिन्तक के रूप में जाना जाता है और इस प्रकार के अधिकांश चिन्तक फ्रांस से संबंध रखते थे।

■ उदारवादी एवं आरंभिक समाजवादियों में समानता के बिंदु:-

1. दोनों की सामाजिक पृष्ठभूमि मध्य वर्ग से थी अर्थात् दोनों मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी थे।
2. दोनों शांतिपूर्ण परिवर्तन में विश्वास रखते थे और क्रांति से परहेज करते थे।

■ असमानता के बिंदु:-

1. जहाँ उदारवादी राज्य की सीमित भूमिका (Minimal state) पर बल देते थे, वहीं आरंभिक समाजवादी श्रमिकों की रक्षा के लिए राज्य की शक्ति में वृद्धि की बात करते थे (Maximal state)।
2. जहाँ उदारवादी मध्यवर्ग के हित से प्रेरित थे, वहीं आरंभिक समाजवादी निम्न वर्ग के हित से।

■ आरम्भिक समाजवादी चिन्तक-

- **सेंट साइमन**- यह एक फ्रांसीसी समाजवादी था जो औद्योगीकरण एवं नगरीय समाज का समर्थक था। उनका मानना था कि प्रकृति के पास अपार संसाधन है। इसलिए आपस में संघर्ष एवं प्रतिस्पर्द्धा करने के बजाय अगर सभी लोग मिल-जुलकर प्रकृति के संसाधन का दोहन करते हैं, तो फिर सबको लाभ मिलता है। उसने यह नारा दिया कि 'प्रत्येक से उसकी क्षमता के अनुसार, प्रत्येक को उसके कार्य के अनुसार'। यह नारा समाजवाद का प्रसिद्ध नारा बन गया।
- **चार्ल्स फोरिए**- यह भी एक फ्रांसीसी चिंतक था। यह औद्योगिक समाज और नगरीय जीवन को शोषण का कारण मानता था। इसने शोषण के विकल्प के रूप में सहकारी खेती पर बल दिया।
- **रॉबर्ट ओवन**- यह एक ब्रिटिश चिन्तक एवं पूँजीपति था। एक उद्योगपति की हैसियत से उसने स्कॉटलैंड स्थित अपनी फैक्ट्री में एक प्रयोग किया। उसने श्रमिकों के वेतन, भत्ते और अन्य सुविधाएँ बढ़ा दीं, परंतु आश्चर्यजनक रूप में उससे फैक्ट्री की आमदनी कम होने के बजाय बढ़ गई। अत: वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि संतुष्ट श्रमिक ही वास्तविक श्रमिक है।
- **लुई ब्लाँ**- लुई ब्लाँ भी एक फ्रांसीसी समाजवादी था, परंतु उसकी दृष्टि पूर्व समाजवादियों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक व्यावहारिक थी। उसका मानना था कि-

1. श्रमिकों की दशा में सुधार के लिए केवल आर्थिक सुविधाएँ देना पर्याप्त नहीं है, बल्कि श्रमिकों का सरकार पर नियंत्रण आवश्यक है। राजनीतिक शक्ति प्राप्त करना इसलिए आवश्यक है कि अगर सरकार श्रमिकों की समर्थक रहेगी, तभी वह श्रमिकों की दशा में सुधार के लिए ठोस कदम उठा सकेगी।
2. राज्य को एक साहूकार की भूमिका निभानी चाहिए और श्रमिकों को उचित पूँजी एवं उपकरण उपलब्ध कराने चाहिए, जिससे उत्पादन के मामले में वे स्वावलम्बी हो

सकें और श्रमिकों का शोषण समाप्त हो सके।

■ **आरंभिक समाजवादियों का योगदान-**

1. सर्वप्रथम इन चिंतकों ने पूँजी एवं श्रम के बीच संबंधों को परिभाषित करते हुए श्रमिकों के शोषण की समस्या को उठाया तथा उसका समाधान ढूँढ़ने का प्रयत्न किया।
3. इन चिंतकों ने अपने स्तर से कुछ संगठनों का निर्माण कर अपने विचारों को फैलाने का भी प्रयास किया। इनके विचारों ने आगे कार्ल मार्क्स को भी प्रेरणा प्रदान की। मार्क्स पेरिस में 'लीग ऑफ जस्ट' नामक संस्था का सदस्य रहा था, जो सेंट साइमन के विचारों पर आधारित थी।

■ **सीमाएँ:-**

1. आरंभिक समाजवादी चिंतकों का दृष्टिकोण अत्यधिक आदर्शवादी था। वे मानव की मूलभूत अच्छाई में विश्वास करते हुए शांतिपूर्ण परिवर्तन की बात करते थे, जो व्यावहारिक रूप में संभव नहीं था।
2. इन चिंतकों का दृष्टिकोण वर्ग-समन्वयवाद पर आधारित था। ये क्रांति के विरोधी थे तथा ये संघर्ष की जगह मेल-जोल से परिवर्तन लाना चाहते थे। आगे वर्ग-समन्वय की अवधारणा कार्ल मार्क्स को प्रभावित नहीं कर सकी तथा वह इससे आगे निकल गया।

वैज्ञानिक समाजवाद अथवा मार्क्सवाद

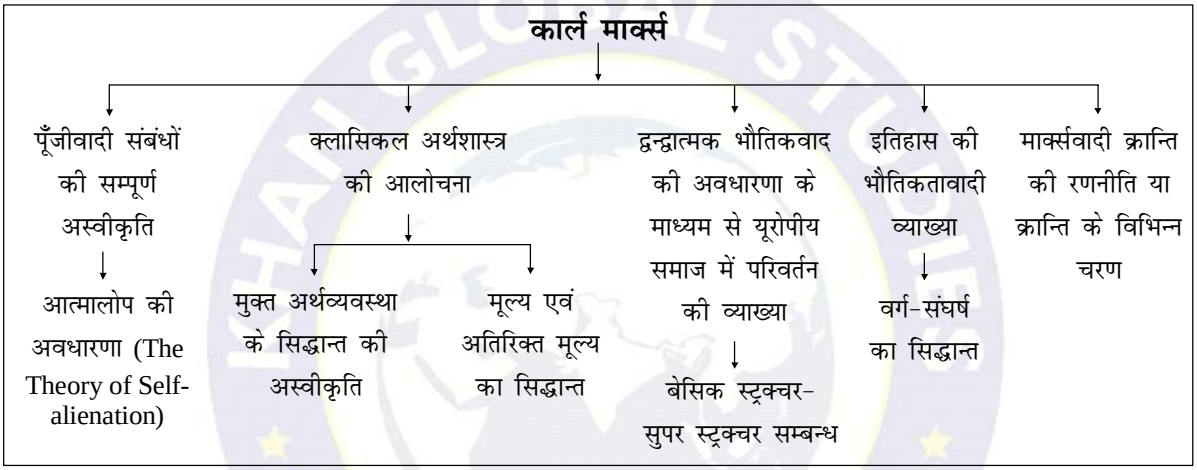

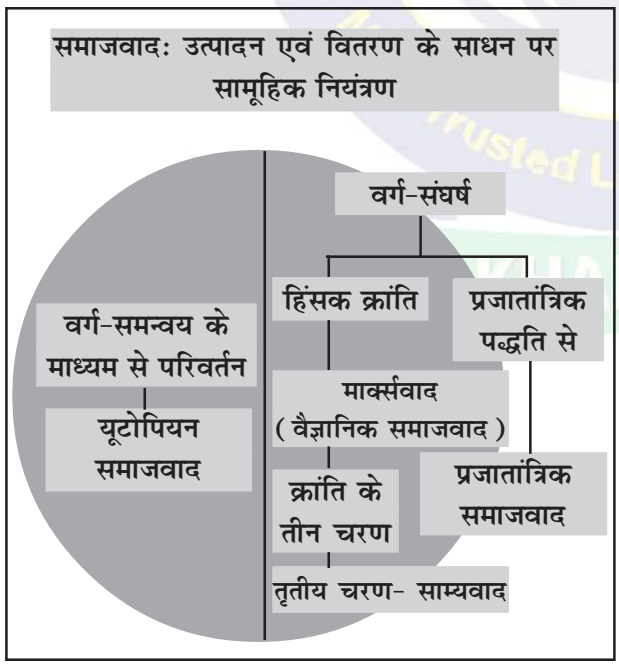

उपर्युक्त डायग्राम निम्नलिखित तथ्य निर्देशित करता है:-

1. समाजवाद एक वृहद् अवधारणा है तथा मार्क्सवाद उसका एक भाग है। इसलिए सभी मार्क्सवादी, समाजवादी हैं, परंतु सभी समाजवादी, मार्क्सवादी नहीं।
2. कमोवेश सभी समाजवादियों का लक्ष्य एक था, वह था समतामूलक समाज की स्थापना, परंतु लक्ष्य को प्राप्त करने के साधन के मुद्दे पर गहरा मतभेद था। कुछ समाजवादी वर्ग-समन्वय के माध्यम से यह लक्ष्य प्राप्त करना चाहते थे, किंतु कार्ल मार्क्स उसे अव्यावहारिक मानता था तथा वह वर्ग-संघर्ष पर बल देते हुए उग्र साधन अपनाने की बात करता था।
3. मार्क्स ने सर्वहारा क्रांति के तीन चरण निर्धारित किए थे। इसमें जो क्रांति का तीसरा चरण होता, उसके लिए उसने 'साम्यवाद' शब्द का प्रयोग किया था। परंतु चूंकि यह तीसरा चरण नहीं आया, अत: आगे साम्यवाद, मार्क्सवाद का पर्यायवाची बनकर रह गया।

■ **कार्ल मार्क्स :-**

- कार्ल मार्क्स एक जर्मन था। उसने 19वीं सदी के एक प्रमुख दार्शनिक हीगेल के विचारों पर अनुसंधान किया। आगे वह एक मानवतावादी पूंजीपति एंजेल्स द्वारा लिखित पुस्तक 'The condition of working class in England' से बहुत प्रभावित हुआ। फिर मार्क्स और एंजेल्स ने मिलकर अनेक रचनाएँ कीं, इनमें एक प्रमुख रचना है

1848 में लिखी गई **'कम्युनिस्ट मेनिफेस्टो'**। फिर 1868 में कार्ल मार्क्स ने **'दास कैपिटल'** का प्रथम भाग लिखा, जबकि उसके द्वितीय और तृतीय भाग को एंजेल्स ने पूरा किया।

- मार्क्स का विचार अपने युग से आगे था और एक तरह से देखा जाए तो यह 19वीं सदी का रूसो था। उसने दुनिया भर के मज़दूरों से अपील की कि विश्व के मज़दूरों एक हो, तुम्हारे पास खोने के लिये कुछ भी नहीं सिवाय दु:ख की शृंखला के अर्थात् जंजीरों के, जबकि पाने के लिये सारा विश्व है। पीछे रूसो ने मानव के जंजीरों में जकड़े होने की बात कही थी, परंतु कार्ल मार्क्स ने उन जंजीरों को उतार देने की अपील की।
- परंतु, उसके जीवन काल में कहीं भी क्रांति घटित नहीं हुई और 1883 में उसकी मृत्यु हो गई। कहा जाता है कि मृतक सीजर, जीवित सीजर से अधिक शक्तिशाली सिद्ध हुआ। यह बात कार्ल मार्क्स पर भी लागू होती है। आगे आने वाले समय में मार्क्स का भूत पूँजीवादी विश्व को डराता रहा और मज़दूरों को सुखद जीवन का आश्वासन देता रहा।

कार्ल मार्क्स की विचारधारा के विभिन्न पहलू निम्नलिखित हैं-

1. पूँजीवादी संबंधों की संपूर्ण अस्वीकृति:

- **आत्मालोप का सिद्धांत (Theory of self alienation)** - कार्ल मार्क्स के अनुसार, सामान्यत: ऐसा माना जाता है कि मानव को पशु से पृथक करने वाली प्रमुख विशेषता तर्कशीलता होती है, किंतु मार्क्स का मानना था कि वह विशेषता होती है मानव के श्रम की क्षमता।
- उसके अनुसार, मानव जो श्रम करता है और जब उस श्रम का लाभ उसे मिलता है तो उसे 'रचनात्मक सुख' प्राप्त होता है। परंतु जब उसका लाभ कोई और ले जाता है और उसे वह प्राप्त नहीं होता, तो फिर उसके समक्ष आत्मालोप की स्थिति उत्पन्न होती है।
- उसके विचार में, एक औद्योगिक व्यवस्था या पूँजीवादी प्रणाली के अंतर्गत श्रमिक आत्मालोप का शिकार बन जाता है और आत्मालोप की अवस्था से उभरने का एकमात्र समाधान है श्रमिकों में वर्गीय चेतना का विकास। फिर वे क्रांति के लिए तैयार हो जाते हैं।

2. क्लासिकल अर्थशास्त्र की आलोचना:

- **मुक्त अर्थव्यवस्था की अवधारणा की अस्वीकृति**- एडम स्मिथ ने मुक्त अर्थव्यवस्था की अवधारणा रखी थी। इसके निम्नलिखित पहलू थे-
  i. बाजार अपने आन्तरिक नियमों से परिचालित होता है, वह है माँग और पूर्ति के नियम।
  ii. उत्पादक, उपभोक्ता एवं श्रमिकों के हित में प्राकृतिक रूप से सामंजस्य होता चलता है।

परन्तु कार्ल मार्क्स ने उपर्युक्त धारणा को चुनौती दी। उसका बल निम्नलिखित तर्क पर था -

i. पूँजीपतियों और श्रमिकों के हित के बीच संतुलन नहीं हो पाता क्योंकि श्रमिक रोटी के लिए संघर्ष करते हैं, तो पूँजीपति मुनाफे के लिए। अत: जाहिर है कि पूँजीपतियों की सौदेबाजी की शक्ति कहीं अधिक होती है और वे मजदूरों को कम वेतन पर काम करने के लिए विवश करते हैं।
ii. इसके अतिरिक्त, कार्ल मार्क्स ने मशीनीकरण के दुष्परिणाम को समझा। उसके अनुसार, मशीनों ने बड़ी आसानी से मानव श्रम को विस्थापित कर दिया। इस कारण श्रमिकों की सौदेबाजी की शक्ति और भी कम हो गयी। अत: एडम स्मिथ जिसे मुक्त अर्थव्यवस्था कहते हैं वास्तव में वह मुक्त अर्थव्यवस्था नहीं होती, बल्कि पूँजीपतियों के एकाधिकार पर आधारित अर्थव्यवस्था होती है।

- **मूल्य एवं अतिरिक्त मूल्य का सिद्धान्त**- क्लासिकल अर्थशास्त्र को ही आधार बनाकर कार्ल मार्क्स ने अतिरिक्त मूल्य का सिद्धांत (Theory of surplus value) दिया था। वस्तुत: क्लासिकल अर्थशास्त्रियों ने यह घोषित किया था कि उत्पादन में पूँजी और श्रम की भूमिका होती है तथा श्रम के द्वारा किसी वस्तु को आकार देकर उसका मूल्य बढ़ाया जाता है। इसी को आधार बनाकर कार्ल मार्क्स ने यह घोषित किया कि चूँकि पूँजीपति उस अतिरिक्त मूल्य को हजम कर जाते हैं और श्रमिकों को उनका अंशदान नहीं देते हैं, इसलिये एक तरफ जहाँ पूँजीपतियों के हाथों में पूँजी का संचय होता चला जाता है, वहीं दूसरी तरफ श्रमिकों की दशा खराब होती जाती है। फिर इस संचित पूंजी को पूँजीपति जब अन्य क्षेत्रों में लगाते हैं, तो फिर अन्य मज़दूरों के शोषण का भी रास्ता तैयार हो जाता है। इसलिये मार्क्स का यह मानना है कि औद्योगिक समाज अपनी मूल संरचना में अन्यायपूर्ण संबंधों पर आधारित है।

3. द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की अवधारणा के माध्यम से यूरोपीय समाज में परिवर्तन की व्याख्या-

- **यूरोपीय समाज के विकास के विभिन्न चरण**- मार्क्स उसी प्रकार यूरोपीय समाज में क्रमिक विकास की अवस्था देखता है, जैसे चार्ल्स डार्विन प्रकृति की विभिन्न प्रजातियों में देखता है। मार्क्स ने इसे निम्नलिखित अवस्था में देखा-

i. **प्रारंभिक समाजवाद अथवा आदिम समाजवाद:**- मार्क्स के अनुसार, यह वह अवस्था है जब लोग सामूहिक रूप

से उत्पादन एवं खपत करते थे तथा निजी संपत्ति अस्तित्व में नहीं आई थी।

ii. **दास व्यवस्था:**- मार्क्स ने प्राचीन यूनानी एवं रोमन समाज में यह अवस्था देखी थी जब कुछ लोगों ने कुछ अन्य लोगों के श्रम पर कब्जा कर लिया और उनके श्रम का शोषण करने लगे।

iii. **सामंतवाद:**- तीसरी अवस्था सामंतवाद की अवस्था थी जब कुछ लोगों ने भूमि संपदा पर कब्जा कर लिया और स्वतंत्र किसानों को कृषि दास में रूपांतरित कर दिया।

iv. **पूँजीवाद:**- अब उत्पादन के नए साधन के रूप में व्यापार और उद्योग अस्तित्व में आए तथा उन पर जो कब्जा किया वे पूँजीपति कहलाये और उनके द्वारा श्रमिकों का शोषण किया जाने लगा। ये श्रमिक सर्वहारा कहे गए।

v. **समाजवाद:**- अब अंतिम अवस्था समाजवाद की होगी जब सर्वहारा वर्ग उत्पादन के इस नए साधन पर कब्जा कर लेगा और फिर बुर्जुआ वर्ग को समाप्त कर देगा।

- **परिवर्तन का सूत्र- द्वन्द्वात्मकता (Dialecticism):-** ऊपर हमने देखा कि यूरोपीय समाज क्रमिक रूप में विकसित होते हुए आगे बढ़ रहा है। अत: यह प्रश्न उपस्थित होता है कि इसमें परिवर्तन के कारक की भूमिका कौन निभा रहा है। कार्ल मार्क्स ने इस बदलाव की व्याख्या द्वन्द्वात्मकता के परिप्रेक्ष्य में की। उसने एक जर्मन दार्शनिक हीगेल से द्वन्द्वात्मकता की अवधारणा ली। हीगेल एक प्रत्ययवादी (विचारधारा की सत्यता को मानने वाला) चिंतक था तथा विचारधारा में होने वाले परिवर्तन को ही सामाजिक परिवर्तन का कारण मानता था। किंतु स्वयं विचारधारा में परिवर्तन कैसे होता है, इसके लिए उसने द्वन्द्वात्मकता की अवधारणा दे डाली। उसके विचार में, पहले एक विचारधारा आती है जिसे उसने 'Being' का नाम दिया। फिर एक दूसरी विचारधारा आती है जो उससे टकराती है। उसे वह 'Not Being' का नाम देता है। फिर ये दोनों आपस में टकराकर एक तीसरी विचारधारा का रूप ले लेती हैं जिसे वह 'Becoming' कहता है। फिर Becoming, Being का रूप ले लेती है.....।
- मार्क्स इस अवधारणा से बहुत प्रभावित हुआ। परंतु मार्क्स मूलत: एक भौतिकतावादी चिंतक था, इसलिए उसने द्वन्द्वात्मकता की अवधारणा को भौतिक पदार्थ के स्तर पर लागू किया और उसे Thesis, Anti-Thesis and Synthesis का नाम दिया। उसने उसे वर्ग-संघर्ष के रूप में व्यक्त किया। फिर इसी आधार पर उसने यूरोपीय समाज के परिवर्तन की व्याख्या की। उसके अनुसार, अगर दास व्यवस्था थेसिस था एवं सामंतवाद एंटीथेसिस, तो पूँजीवाद सिन्थेसिस और अगर सामंतवाद थेसिस था तथा पूँजीवाद एंटीथेसिस, तो समाजवाद सिन्थेसिस।

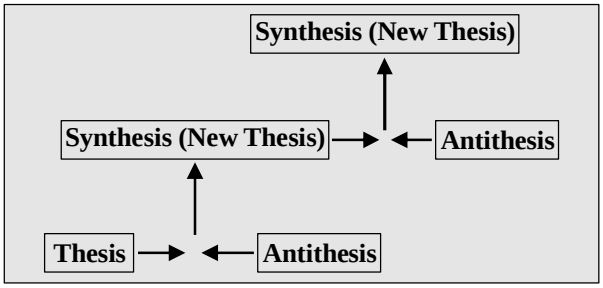

4. इतिहास की भौतिकतावादी व्याख्या एवं वर्ग-संघर्ष:-

- क्लासिकल अर्थशास्त्रियों ने अर्थव्यवस्था की व्याख्या करते हुए तीन वर्गों की बात कही थी, यथा - ज़मींदार, पूँजीपति एवं श्रमिक। मार्क्स ने उन्हें दो समूहों में विभाजित कर दिया- पूँजीपति वर्ग एवं सर्वहारा वर्ग। उसी प्रकार कार्ल मार्क्स से पहले भी चिंतक आर्थिक-भौतिक कारक का प्रभाव मानव के परिवेश एवं वातावरण पर स्वीकार करते थे, परंतु मार्क्स ने उसमें भी एक प्रमुख कारक के रूप में **उत्पादन के साधन** पर बल दिया था तथा उत्पादन के साधनों में होने वाले परिवर्तनों को इतिहास के परिवर्तनों से जोड़कर देखा। इसलिये इसे इतिहास की भौतिकतावादी व्याख्या के रूप में देखा जा सकता है।

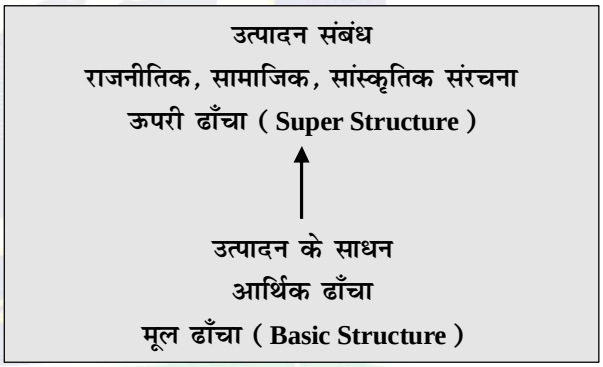

- मार्क्स के अनुसार उत्पादन के साधन पर कब्ज़ा करने के लिये दो वर्गों के बीच निरंतर संघर्ष चलता रहता है। इस संघर्ष में जो वर्ग विजेता बन जाता है, वह उत्पादन के साधन अथवा आर्थिक ढाँचे पर कब्ज़ा कर लेता है। फिर उस ढाँचे पर अपने नियंत्रण को आगे भी बनाए रखने के लिये वह राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक ढाँचे में इस प्रकार के परिवर्तन लाता है कि उत्पादन के साधन पर आगे भी नियंत्रण बना रहे और वह नियंत्रण मज़बूत रहे। इसीलिये मार्क्स उत्पादन के साधन को मूल ढाँचा (Basic Structure) और उत्पादन के संबंधों को ऊपरी ढाँचे (Super Structure) का नाम देता है।

5. मार्क्सवादी क्रांति के विभिन्न चरण :-

- मार्क्स ने सर्वहारा क्रांति के तीन चरण निर्धारित किए-

1. **प्रथम चरण अथवा प्रत्यक्ष कार्यवाही (Direct action) का चरण**– इस चरण में वर्गीय चेतना उभरने के बाद सर्वहारा वर्ग रक्तपूर्ण क्रांति के माध्यम से उत्पादन के साधन पर कब्जा कर लेगा।
2. **द्वितीय चरण अथवा सर्वहारा वर्ग की तानाशाही का चरण**– इस चरण में मार्क्स का बल निम्नलिखित बातों पर रहा–
   i. जिस प्रकार पहले राज्य का उपयोग कर बुर्जुआ वर्ग ने सर्वहारा वर्ग का शोषण किया था, उसी प्रकार अब सर्वहारा वर्ग उसी राज्य का उपयोग कर बुर्जुआ वर्ग को समाप्त कर देगा अर्थात् निजी सम्पत्ति की समाप्ति।
   ii. साथ ही, इस क्षेत्र का सर्वहारा वर्ग अन्य क्षेत्रों में क्रांति का निर्यात करेगा जिससे अन्य क्षेत्रों में भी सर्वहारा क्रांति घटित होगी और सर्वहारा का अधिनायकवाद स्थापित हो जाएगा अर्थात् विश्व क्रान्ति के लक्ष्य की प्राप्ति।
3. **तृतीय चरण अथवा वर्ग–विहीन एवं राज्यविहीन समाज का चरण**– जब संपूर्ण विश्व में एक ही वर्ग अर्थात् सर्वहारा वर्ग रह जाएगा, तो फिर राज्य की आवश्यकता समाप्त हो जाएगी और संपूर्ण विश्व में एक ही राज्य रह जाएगा क्योंकि अन्य राज्य लुप्त हो जाएंगे। इस अवस्था को मार्क्स ने साम्यवाद का नाम दिया था। उसके अनुसार, निजी संपत्ति की समाप्ति के साथ मानव के सभी कुविचार मिट जाएंगे और वे आपस में शांति और सहयोग से जीने लगेंगे। राष्ट्र के समाप्त होते ही सैन्य तैयारी, युद्ध सब कुछ समाप्त हो जाएगा, परंतु यह चरण स्वयं मार्क्स का यूटोपिया (कल्पना) सिद्ध हुआ।

■ **कार्ल मार्क्स के द्वारा यूरोप में श्रमिकों को संगठित करने के लिए उठाए गए कदम:–**

• कार्ल मार्क्स ने तात्कालिक पूँजीवादी व्यवस्था को न केवल सशक्त वैचारिक चुनौती दी, बल्कि उसने उस विचारधारा को फैलाने के लिए सक्रिय प्रयास भी किया। उसका मानना था कि सर्वहारा क्रान्ति उस देश में होगी, जो औद्योगीकरण में सबसे आगे है क्योंकि वहाँ पूँजी और श्रम के हितों के बीच सबसे अधिक टकराहट होगी तथा इस कारण मजदूरों का अत्यधिक शोषण होगा एवं उनमें वर्गीय चेतना आएगी। अत: लंदन में उसने एक वर्किंग मैन एसोसिएशन का गठन कर ब्रिटेन के श्रमिकों को संगठित करने की योजना रखी। फिर, 1864 में उसने **'सोशलिस्ट इंटरनेशनल'** का गठन किया तथा इसके माध्यम से नवीन विचारों को फैलाने का प्रयास किया। यद्यपि यह अत्यधिक समय तक नहीं चल सका अर्थात् शीघ्र ही इसका विघटन हो गया।

■ **कार्ल मार्क्स की गतिविधियों का परिणाम**–

• पश्चिमी यूरोप एवं मध्य यूरोप में श्रमिक संघर्ष तीव्र होने लगा तथा कई संगठन बनने लगे। जब 1870 के सेडान के युद्ध में फ्रांस की पराजय हुई, तो राजतंत्र के विरुद्ध गहरा असंतोष उत्पन्न हुआ। फिर 1871 में श्रमिकों ने फ्रांस की राजधानी पेरिस पर कब्जा कर लिया। इसे **'पेरिस कम्यून'** के नाम से जाना गया। हालांकि, दो महीने के पश्चात् कम्यून का पतन हो गया, परंतु आगे चलकर फ्रांस में एक कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना हुई। उसी प्रकार, 1880 के दशक में ब्रिटेन में भी श्रमिक आंदोलन में अत्यधिक तेजी आ गई थी और 1889 में लंदन बंदरगाह पर एक बड़ी हड़ताल हुई। परंतु उसके बाद ब्रिटेन में एक लेबर पार्टी का गठन हुआ तथा लेबर पार्टी ने प्रगतिशील आर्थिक कार्यक्रम को अपनाया। फिर वही समय था जब जर्मनी में मार्क्सवादी विचारों से प्रभावित होकर एक सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी सक्रिय हो गई थी।

• परंतु समाजवादी विचारों के प्रसार एवं श्रमिक गतिविधियों में तीव्रता आने के पश्चात् भी पश्चिमी यूरोप के किसी भी देश में सर्वहारा क्रांति घटित नहीं हो सकी, जबकि ये देश औद्योगीकरण की दिशा में प्रगति कर चुके थे। 1883 में मार्क्स निराश होकर मरा और वह इतिहास में एक गलत भविष्यवक्ता सिद्ध हुआ। **अब अगर हम इसके कारणों का परीक्षण करते हैं तो निम्नलिखित कारण उभर कर आते हैं**–

1. मार्क्स पूँजीवाद के अनुकूलन की शक्ति को नहीं समझ सका। दूसरे शब्दों में, उसने क्रांति की एक वैज्ञानिक सूत्र के रूप में व्याख्या करने का प्रयास किया; यथा– अधिक औद्योगीकरण का अर्थ औद्योगिक श्रमिकों की संख्या में व्यापक वृद्धि तथा श्रमिकों का शोषण, फिर श्रमिकों में असंतोष तथा उनमें वर्गीय चेतना का आना तथा इसके साथ ही सर्वहारा क्रांति घटित होना। परंतु स्वयं मार्क्स को इस बात का अंदाजा नहीं था कि पूँजीवाद अपने व्यवहार को निम्नलिखित रुप में बदल लेगा–
   i. कुलीन वर्ग और मध्य वर्ग, श्रमिक वर्ग के विरुद्ध आपस में गठबंधन कायम कर लेंगे।
   ii. पूँजीवादी हितों पर आधारित यूरोपीय सरकारें श्रमिकों को क्रांति से विलग करने के लिए श्रमिक कल्याणकारी कार्यक्रम ले आऐंगी।
2. जैसा कि आगे मार्क्स के अनुयायी लेनिन ने सिद्ध किया कि पूँजीवाद ने अपने आप को बचाने के लिए साम्राज्यवाद

का सहारा लिया। अर्थात् कुछ समय तक अपने श्रमिकों के शोषण को रोककर वे अपने साम्राज्य की ओर मुड़ गए तथा उन साम्राज्यों से उन्होंने जो धन प्राप्त किया, उसका एक अंश अपने श्रमिकों को देने लगे। इसलिए उनके श्रमिक क्रांति से दूर हट गये।

■ **क्या मार्क्सवादी समाजवाद विफल रहा?**

- ऐसा हम नहीं कह सकते। वस्तुतः मार्क्सवादी समाजवाद के भय से पूँजीवादी सरकारों ने अपने व्यवहार में कुछ प्रमुख परिवर्तन ला दिए थे। ये इस प्रकार हैं –

1. श्रमिकों के लिए लोक कल्याणकारी कार्यों को प्रोत्साहन दिया गया।
2. श्रमिकों के बीच मताधिकार का विस्तार किया गया।
3. यूरोप में कई राजनीतिक दलों ने अपनी पार्टी को समाजवादी पार्टी का नाम दिया।
4. अधिकांश यूरोपीय देशों ने अपने संविधान में समाजवादी गणतंत्र जैसे लक्ष्य को अपना लिया।

प्रश्न :- मार्क्सवाद, फ्रांसीसी समाजवाद तथा हीगेल के विचारों की सन्तति (संतान) था। टिप्पणी कीजिए।

उत्तर :- मार्क्सवाद, समाजवाद का उग्र रूप था तथा इसे प्रेरित करने में एक से अधिक कारकों की भूमिका रही थी। ये कारक थे- फ्रांसीसी समाजवादियों एवं जर्मन दार्शनिक हीगेल के विचार।

फ्रांसीसी समाजवादियों की भूमिका-

- सेंट साइमन, चार्ल्स फोरिए एवं लुई ब्लाँ जैसे फ्रांसीसी समाजवादियों ने निम्नलिखित रूप में मार्क्स को प्रेरणा प्रदान की-

1. सर्वप्रथम फ्रांसीसी समाजवादियों के द्वारा औद्योगीकरण के शोषणमूलक स्वरूप को उद्घाटित किया गया।
2. फ्रांसीसी समाजवादियों के द्वारा सर्वप्रथम यह माँग की गयी कि औद्योगीकरण का लाभ श्रमिक वर्ग को ही मिले।
3. इन्होंने सरकार से अपील की कि वह श्रमिकों के हितों की रक्षा के लिए ठोस कदम उठाए। लुई ब्लाँ ने श्रमिकों को राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया।

फिर भी हीगेल का योगदान मार्क्सवाद में कहीं ज्यादा है। उपर्युक्त समाजवादी चिन्तकों ने वर्ग-समन्वय की बात कही थी, परन्तु हीगेल के दर्शन से मार्क्स को संघर्ष की प्रेरणा मिली। उसने हीगेल की द्वन्द्वात्मकता की अवधारणा को भौतिकवाद से जोड़कर 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' की अवधारणा विकसित की तथा इसके माध्यम से वर्ग-संघर्ष पर बल दिया।

इस तरह, मार्क्सवाद, फ्रांसीसी समाजवाद एवं हीगेल की विचारधारा का ऋणी रहा है।

प्रश्नः- 19वीं सदी के यूरोप पर मार्क्सवाद के प्रभाव का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

उत्तरः- 19वीं सदी में कार्ल मार्क्स ने न केवल पूँजीवाद पर उग्र वैचारिक प्रहार किया, बल्कि श्रमिक आंदोलन की संपूर्ण रणनीति भी प्रस्तुत की। यह दूसरी बात है कि वह अपने लक्ष्य में आंशिक रूप से ही सफल रहा।

मार्क्स के द्वारा उठाए गए कदम-

1. पूँजीवादी उत्पादन प्रणाली पर चोट करते हुए सर्वहारा क्रान्ति की रूपरेखा प्रस्तुत की।
2. ब्रिटेन के श्रमिकों को संगठित करने के लिए वर्किंग मैन एसोसिएशन का गठन किया।
3. 1864 में सोशलिस्ट इंटरनेशनल का गठन कर श्रमिकों में क्रान्ति की चेतना जगाने का प्रयास किया।

प्रभाव-

ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी आदि देशों में श्रमिक गतिविधियाँ बढ़ गईं। उदाहरण के लिए, 1871 में पेरिस कम्यून, जर्मनी में सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी की प्रगति तथा ब्रिटेन में लेबर पार्टी का गठन। परन्तु मार्क्स के जीवनकाल में कहीं भी सफल सर्वहारा क्रान्ति घटित नहीं हो सकी।

फिर भी, हम इतना तो मान ही सकते हैं कि भले ही उसने पूँजीवाद का अन्त नहीं किया, किन्तु पूँजीवाद का व्यवहार तो अवश्य ही बदल डाला। अब यूरोप की पूँजीवादी सरकारें श्रमिकों के बीच कल्याणकारी कार्य कर रही थीं तथा उनके बीच मताधिकार का विस्तार कर रही थीं।

अपनी आंशिक सफलता के बावजूद मार्क्सवाद लगभग 150 वर्षों तक पूँजीवादी विश्व के लिए सबसे बड़ी चुनौती बना रहा।

अंतर्अनुशासनात्मक दृष्टिकोण

19वीं सदी के प्रमुख विचारक एवं उनका प्रभाव

वह विचारक जिन्होंने 19वीं सदी के इतिहास पर सबसे अधिक प्रभाव डाला, वे थे- कार्ल मार्क्स, चार्ल्स डार्विन और फ्रैडरिक नीत्से। जैसा कि हमने देखा कार्ल मार्क्स ने आर्थिक संबंधों की वैज्ञानिक पद्धति के माध्यम से व्याख्या करने की कोशिश की थी। उसी प्रकार चार्ल्स डार्विन ने मानव तथा विभिन्न जीव-जंतुओं की उत्पत्ति की व्याख्या वैज्ञानिक पद्धति के माध्यम से की। उसने 1859 में ऑरिजिन ऑफ स्पेशीज़ (Origins of Species) की रचना की। उसमें उसने यह दिखाने का प्रयास किया कि इस पृथ्वी पर मानव का विकास क्रमिक रूप में हुआ। विभिन्न जीव-जंतुओं में संघर्ष होता रहा था। इनमें जो कमज़ोर थे, वे मिट गए और जो शक्तिशाली थे, वे बढ़कर आगे आए। इस तरह कमज़ोर प्रजाति से धीरे-धीरे शक्तिशाली प्रजाति का विकास हुआ। इसी आधार पर योग्यतम की उत्तरजीविता (Survival of Fittest) की अवधारणा निकलकर आई। डार्विन की विचारधारा ने निम्नलिखित प्रभाव पैदा किया-

प्रथम, इस विश्व की उत्पत्ति के संदर्भ में जो ईसाई धर्म की अवधारणा थी, जिसके तहत इस पृथ्वी को महज़ कुछ हज़ार वर्ष पुराना माना गया था, ध्वस्त हो गई तथा पृथ्वी के उद्भव के संबंध में एक वैज्ञानिक विचारधारा उभरकर आई। दूसरे, यद्यपि चार्ल्स डार्विन का विचार तो पृथ्वी एवं जीव-जंतुओं की उत्पत्ति के संदर्भ में था परंतु कुछ व्यक्तिवादी चिंतकों ने इसे सामाजिक संबंधों में भी लागू करने का प्रयास किया। इसे सामाजिक डार्विनवाद (Social Darwinism) के नाम से जाना गया। ऐसा ही एक चिंतक था हर्बर्ट स्पेंसर। उसने डार्विन से पहले ही सामाजिक संदर्भ में योग्यतम की उत्तरजीविता के सिद्धांत को प्रतिपादित करने का प्रयास किया था। फिर डार्विन के विकास के आगमन के पश्चात् इस विचार को और भी प्रोत्साहन मिला। हर्बर्ट स्पेंसर मार्क्स के बिलकुल विपरीत था। अगर मार्क्स उग्र समाजवादी था तो हर्बर्ट स्पेंसर उग्र व्यक्तिवादी। हर्बर्ट स्पेंसर का मानना था कि समाज में भी प्रतिभाशाली व्यक्ति को आगे बढ़ने का अवसर मिलना चाहिये और कमज़ोर लोगों को मिट जाना चाहिये। अपने इसी विचार के प्रभाव में उसने सरकार के द्वारा कल्याणकारी कार्य किये जाने का विरोध किया। उसके विचार में इससे राज्य के धन का अपव्यय होगा और कमज़ोर को बचाने का प्रयास व्यर्थ है। इसी आधार पर युद्ध को भी उचित करार दिया क्योंकि इसके माध्यम से कमज़ोर मिट जाते हैं और शक्तिशाली को आगे बढ़ने का अवसर मिलता है। स्पेंसर के इस विचार ने अमेरिकी पूंजीपतियों पर गहरा प्रभाव डाला और उन्होंने खुली प्रतिस्पर्द्धा पर बल दिया। आगे यूरोप में मुसोलिनी और हिटलर जैसे उग्र राष्ट्रवादियों की चेतना पर भी सामाजिक डार्विनवाद का प्रभाव देखा गया।

19वीं सदी का ही एक दूसरा चिंतक था नीत्से। उसकी सोच भी रेडिकल अथवा मूल परिवर्तनवादी थी। उसने प्लेटो के काल से लेकर 19वीं सदी तक जितने भी विचार थे, उन सभी को चुनौती दे डाली। उसने घोषित किया कि न तो कोई एकमात्र सत्य और न ही सत्य की ओर जाने वाला कोई एक मार्ग। एक तरह से अगर देखा जाए तो यह विचारधारा उत्तर-आधुनिकतावाद की भी पूर्वगामी बन गई।

इन चिंतकों के ठीक बाद 20वीं सदी के आरंभिक दशक में एक क्रांतिकारी विचारधारा लेकर एक और चिंतक आया, वह था सिग्मंड फ्रायड। अगर मार्क्स ने वैज्ञानिक पद्धति को आर्थिक क्षेत्र में लागू किया था और डार्विन ने इसे पृथ्वी और मानव के विकास के संदर्भ में तो फ्रायड ने इसे मानव की सोच और जीवन के दृष्टिकोण के अध्ययन के संदर्भ में लागू किया। उसने जिस पद्धति का विकास किया उसे मनोविश्लेषण (Psycho Analysis) का नाम दिया जाता है। उसने मानव के व्यक्तित्व के मूल्यांकन का आधार ही बदल दिया तथा यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि मानव का कार्य-व्यवहार उसके चेतन (Concious) मस्तिष्क की तुलना में अवचेतन (Unconcious) मस्तिष्क से अधिक प्रभावित होता है। इसका परिणाम यह हुआ कि अब किसी व्यक्ति को अच्छे तथा बुरे दो भिन्न ध्रुवों में बांटकर देखना मुश्किल हो गया। उसी प्रकार तर्कवाद जैसी अवधारणा को भी चुनौती मिली क्योंकि भले ही हमारा चेतन मन तर्क को स्वीकार कर सकता है परंतु अवचेतन मन अपने मन से व्यवहार करता है।

उपर्युक्त सभी चिंतकों ने 19वीं सदी से लेकर आरंभिक 20वीं सदी के इतिहास को एक भिन्न दिशा दे दी और अप्रत्यक्ष रूप में प्रथम विश्वयुद्ध में भी उनका योगदान रहा।

■■■